प्रतिकूल बाल लिंग अनुपात, मानसिकता और सरकार की नीति

मैरी ई जॉन

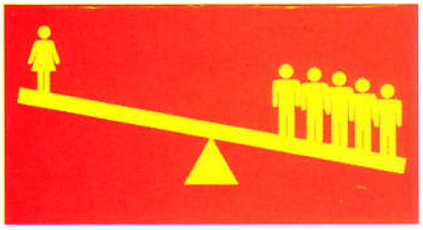

भारत में, प्रतिकूल लिंग अनुपात का मुद्दा कम से कम औपनिवेशिक काल से हमारे इतिहास का हिस्सा रहा है। यह 1970 के दशक में पुनः एक बड़ी समस्या के रूप में उभरा। उन्नीसवीं सदी में ब्रिटिश अधिकारियों द्वारा यह पता लगाने का प्रयास कि राजपूत और जाट क्यों अपनी बेटियों की मार देते थे या फिर आज़ाद भारत में जनसांख्यिकविदों द्वारा यह जानने की कोशिश करना कि क्यों आज़ादी के बाद भी महिलाओं की कुल संख्या में पुरुषों के सापेक्ष गिरावट आ रही है, का मामला हो, इसके तह तक जाने के लिए कभी भी कम गुत्थियों या मतभेदों का सामना नहीं करना पड़ा है

1980 के दशक के बाद, एक चौंकाने वाला नया आयाम प्रकाश में आया, जब यह पता चला कि दिल्ली, अमृतसर और बम्बई जैसे बड़े शहरों में भ्रूण विकास के दौरान भ्रूण के लिंग का पता लगाने के लिए नई प्रौद्योगिकियों का इस्तेमाल हो रहा है, जिससे कि भ्रूण के मादा (लड़की) पाए जाने पर उस भ्रूण का गर्भपात करा दिया जाता है।

चिकित्सा पेशेवरों द्वारा प्रौद्योगिकी के दुरुपयोग से पक्षपाती लिंग चयन में सहायता करने की वजह से, भारत सरकार ने पक्षपात और प्रसव पूर्व निदान तकनीक (पीसी-पीएनडीटी) अधिनियम के जरिये इस व्यवस्था को आपराधिक बना दिया। दोषी डॉक्टरों और रेडियोलॉजिस्ट को पकड़ कर लिंग चयन की प्रथा को रोकने के लिए लंबे समय से एक महत्वपूर्ण अभियान चलाया जा रहा है। प्रमुख क्लीनिक, चिकित्सा पेशेवरों और राज्य स्तर की निगरानी निकायों के बीच सांठगांठ के आम प्रसार के कारण इस अभियान को गति देना एक दुष्कर कार्य रहा है। इसके लिए बहुत अधिक उत्साह की आवश्यकता थी, जो कि केवल बहुत कम समर्पित सरकारी कर्मचारियों और जिला कलेक्टरों (उदाहरण के लिए फरीदाबाद में, हैदराबाद में) के बीच दिखाई दी या गैर सरकारी संगठनों और मीडिया के लोगों (राजस्थान में और महाराष्ट्र के बीड जिले में) द्वारा भ्रूण के लिंग बताने और इस प्रकार अपने पेशे को कलंकित करने वाले चिकित्सा पेशेवरों को अभिनव स्टिंग ऑपरेशन के जरिये बेनकाब किया गया। कुछ लोगों ने चेताया है कि इस तरह की वकालत, गर्भपात के खिलाफ एक अनजाने अभियान में बदल सकता है। गर्भपात (यह भारत में कभी भी महिलाओं का पूर्ण विकसित अधिकार नहीं रहा है, बल्कि इसे हमारे परिवार नियोजन कार्यक्रमों से जोड़ा गया) महिलाओं के लिए ज्यादा सही मायने में आवश्यक होने पर भी इस सुविधा को पाने पर खतरा मंडराने लगा।

मानसिकता की समीक्षा

लोग लिंग निर्धारण के लिए जाते क्यों हैं, के कारणों के सबसे आम विश्वासों में से एक 'मानसिकता' का विचार है। कितनी बार लोगों से सुना जाता है कि लोगों की मानसिकता इस समस्या की जड़ है और इसलिए जरूरत है 'मानसिकता' बदलने की! मानसिकता का वास्तव में क्या मतलब है? शब्दकोश के अनुसार, मानसिकता शब्द से आशय 'किसी व्यक्ति के स्थापित नजरिए' से है, और शब्दकोश में इसके लिए जो उपयुक्त उदाहरण दिया गया है, उसमें कहा गया है, ''अमुक क्षेत्र एक मध्ययुगीन मानसिकता में फंस गया प्रतीत होता है''।

मुझे लगता है कि परिभाषा और उदाहरण दोनों बहुत अच्छी तरह से इस

लेखिका नयी दिल्ली स्थित महिला विकास अध्ययन केंद्र की वरिष्ठ फेलो हैं। वह महिला विकास अध्ययन केंद्र की निदेशक और जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय में महिला अध्ययन कार्यक्रम की एसोसिएट प्रोफेसर और उप निदेशक रही हैं। महिला तथा लिंगभेद जैसे विषयों पर उनके अनेक आलेख प्रकाशित हैं। ईमेल : maryejohn1@gmail.com

धारणा को समझने के संदर्भ में उपयोगी हैं और लिंग निर्धारण की प्रथा का विरोध कर रहे हैं। हम मानते हैं कि इस व्यवस्था के दोषी परिवार, बेटों और बेटियों के बारे में तय विचारों और उन्हें कैसे मान्यता दें, से पीड़ित हैं। उनके विचार 'अटके हुए हैं', क्योंकि यह सदियों पुरानी परंपरा से उपजा है जिसमें बेटियों का अवमूल्यन किया गया है। इसका यह भी मतलब है कि जब हम कहते हैं कि लोगों को अपनी मानसिकता को बदलना चाहिए, हम उन्हें कम पारंपरिक और विचारों में उन्हें और अधिक आधुनिक बनना चाहते हैं।

वर्तमान समय में परिवार, बच्चों के होने और उनके लालन-पालन के लिए साधन जुटाने में सक्षम होने के विचार के बीच संघर्ष कर रहे हैं। यह एक बहुत गतिशील और जटिल रिश्ता है जिसमें परिवार व्यापक रूप से और गहराई से अपने आधुनिक परिवेश से प्रभावित हो रहे हैं।

प्रतिकूल बाल लिंग अनुपात पर हमारे शोध के आधार पर, मुझे विश्वास है कि यह इस समस्या की बहुत ही अपर्याप्त समझ है। जब हम इस प्रकार से सोचते हैं, हम पाते हैं कि लोग जिस समयकाल में रह रहे हैं, उससे उनका कोई तालमेल नहीं है। बल्कि आइए सवाधानी पूर्वक देखते हैं कि जब कोई परिवार बेटे की चाहत करता और बेटी के लिए अनिच्छा जाहिर करता है, तब आज के समय में वे क्या सोच रखते हैं। परिवार सिर्फ सदियों पुराने विचारों के आधार पर ही अपने भविष्य की योजना नहीं बना रहे हैं, बल्कि वे देखते हैं कि किन संसाधनों की बदौलत वे अपनी आशाओं को पूरे कर पाएंगे।

तो, हां, हम लोगों के व्यवहार और विचारों को परख रहे हैं, लेकिन ये विचार वही हैं जिसने उसी समकालीन सामाजिक और आर्थिक संदर्भ के भीतर आकार लिया है, जिसमें हम रहते हैं। दूसरे शब्दों में, (जॉन व अन्य 2008; यू एन वूमेन 2015)

इसका तात्पर्य यह भी है कि इस तरह के सवाल पूछने होंगे कि, 1980 के दशक से नई प्रौद्योगिकियों की उपलब्धता के अलावा पिछले कुछ दशकों की किन परिघटनाओं ने निर्णय लेने की क्षमता को प्रभावित करने में अपनी भूमिका निभाई है? विशेष रूप से किस प्रकार के परिवार अतिसंवेदनशील पाए गए हैं?

सबसे पहले, यह उल्लेख किया जा सकता है कि शीघ्रता से आगे बढ़ने वाले बाल लिंग अनुपात की अवधि भी भारत की आर्थिक विकास में भारी उछाल की अवधि से मेल खाती है, जो कि 1990 के दशक के बाद का काल है। हालांकि भारी आर्थिक विस्तार और उसके पीछे परिवर्तन से यह तथ्य सामने आया है कि इस तरह के विकास का लाभ बहुत असमान रहा है और यह पुराने लोगों के स्थान पर पर्याप्त मात्रा में नई नौकरियों के सृजन नहीं कर पा रही है। इस सब में, महिलाएं सबसे अधिक त्रस्त रही हैं।

हालांकि उनमें से कई का कहना है कि वे एक लड़का और एक लड़की की चाहत रखते हैं, जिसका सही मायने में आशय होता है, 'कम से कम एक बेटा और अधिक से अधिक एक बेटी।' इसके अलावा, इस तरह के परिवार अपने बच्चों के लिए पर्याप्त देखभाल और पोषण, अच्छी शिक्षा और उनके वयस्क होने पर उन्हें सफलतापूर्वक स्थायित्व - लड़के के लिए एक विश्वसनीय नौकरी और लड़की के लिए एक स्थिर वैवाहिक जीवन, देने की चाहत में, काफी 'आधुनिक' हैं। लेकिन यह कार्य कहने जितना आसान नहीं है और इसने बोझ और चिंता का एक विशाल भाव पैदा कर दिया है, खासकर जब आर्थिक और सांस्कृतिक तौर पर इतनी अनिश्चितता भरे माहौल में एक बेटी को जन्म देने की बात आती हो। अत: एक लंबी कहानी को संक्षेप में बताएं तो, परिवार जब बेटी नहीं पैदा करने का मन बनाते हैं, तो यह बहुत हद तक जिस समय में वे रह रहे हैं, उसी के मुताबिक उनकी 'मानसिकता' को परिलक्षित करता है।

सरकारी योजनाओं की महत्वपूर्ण भूमिका

ऐसे में इसे रोकने के लिए सरकार को संसाधनों का उपयोग करना चाहिए, राज्य और केंद्रीय स्तर पर इस प्रकार की योजनाएं बनानी चाहिए जिसका उपयोग परिवारों के लिए सही संकेत देने के लिए किया जा सके। जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है, ये ऐसे परिवार हैं जो गरीबी से ऊपर हैं, फिर भी अपने उपलब्ध संसाधनों के मुताबिक ही अपने भविष्य की रूपरेखा तैयार करने में जुटे हैं, ऐसे परिवार एक बेटा और एक बेटी वाले पूर्ण परिवार सुनिश्चित करने के लिए लिंग चयन की व्यवस्था को अपनाने के प्रति सबसे अधिक अतिसंवेदनशील होते हैं। कई राज्यों में 2001 की जनगणना के बाद 0-6 साल के बच्चों के लिंग अनुपात में बड़े पैमाने पर का पता चला, जिसके बाद *बालिका* को कम महत्व देने की समस्या को दूर करने के लिए, विशेषकर राज्य स्तर पर कई योजनाएं शुरू की गईं और मौजूदा योजनाओं में सुधार किया गया।

ऐसी योजनाओं में कुछ जैसे, *अपनी बेटी अपना धन* की रचना बाल विवाह को रोकने, गरीबी रेखा से नीचे के परिवारों को अपनी लड़कियों को स्कूल भेजने और 18 साल की उम्र से पहले उनकी शादी नहीं करने के लिए प्रेरित करने के लिए किया गया। इन योजनाओं ने हरियाणा, पंजाब, हिमाचल प्रदेश, दिल्ली और मध्य प्रदेश जैसे कई राज्यों में सशर्त नकद हस्तांतरण योजनाओं का रूप ले लिया। जैसा कि नाम से ही स्पष्ट होता है, लाडली, धनलक्ष्मी और इस प्रकार के अन्य योजनाओं को संशोधित किया गया ताकि परिवारों को बेटियों के जन्म के लिए प्रोत्साहित किया जा सके। इन योजनाओं के तहत बच्ची के जन्म, टीकाकरण से लेकर स्कूली शिक्षा के विभिन्न चरणों में उसके नाम पर एक धनराशि बैंक खाते में डाल दिए जाते

परिवार जो अत्यंत गरीबी में नहीं हैं, कम बच्चे पैदा कर, परिणाम स्वरूप उन पर होने वाले निवेश को सीमित रखकर अपनी आर्थिक स्थिति में सुधार लाने के लिए प्रयासरत हैं, ऐसे परिवार लिंग चयन के प्रति सबसे अधिक अतिसंवेदनशील पाए गए हैं।

हैं, जिसकी एकमुश्त राशि बच्ची के 18 वर्ष के हो जाने और तब तक अविवाहित रहने पर उसे सौंप दिया जाता है। इन योजनाओं के पीछे यह विचार था कि वित्तीय आधार पर कोई अनचाही बेटी को बोझ न समझे, लेकिन इन योजनाओं के साथ भी बहुत सी शर्तें जोड़ दी गईं, जिससे इसके संचालन पर प्रतिकूल असर पड़ा है। इन योजनाओं पर विभिन्न अध्ययन किए गए हैं। (आईसीआरडब्ल्यू 2014; शेखर 2012) कुछ अध्ययनों में पता चला है कि पात्र बच्चों को जिन्हें इस योजना में दर्ज नहीं किया गया था, की तुलना में लाभार्थी परिवारों में स्कूल प्रतिधारण में मामूली सुधार हुआ है। दूसरे अध्ययनों से पता चला है कि कई शर्तों को लगा देना, योजना में एक प्रमुख बाधा बन गया है;

सबसे बुनियादी स्तर पर यह है कि विकास का ऐसा स्वरूप हो जो माता पिता को अपने बेटे और बेटियों को लेकर अलग-अलग तरह से सोचने पर मजबूर न करे। जैसे कि महिला और पुरुष दोनों के लिए रोजगार की संभावनाएं आदि। इसमें माता पिता के बीच अपनी बेटियों के यौन सुरक्षा के बारे में बढ़ते भय का भी समाधान किए जाने की आवश्यकता है।

विशेष कर बीपीएल परिवारों को लक्षित किए जाने से यह गरीबी रेखा के ऊपर बहुत-से ऐसे परिवारों तक नहीं पहुंच रहा है, जिनमें लिंग निर्धारण करवाने की बहुत अधिक संभावना है। फिर भी कुछ लोगों ने इसका यह कहकर आलोचना की है कि इन योजनाओं से जनता में इस धारणा को मजबूत किया जा रहा है कि बेटियां परिवार पर बोझ होती हैं।

दो साल पहले केंद्र सरकार ने 100 करोड़ रुपए की कुल बजट के साथ एक नई योजना *बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ* काफी धूमधाम के साथ शुरू की थी। हरियाणा जैसे राज्यों में जहां कई जिलों में लंबे समय से कम बाल लिंग अनुपात की समस्या चली आ रही है, नगरों में और मुख्य राजमार्गों पर, बसों के पीछे विशाल होर्डिंग्स के जरिये और राज्य पदाधिकारियों द्वारा लगातार किए जा रहे घोषणाओं में, यह योजना व्यापक रूप से दिखाई पड़ रही है। हालांकि नेकनीयत वाली इन योजनाओं को अपनी सीमाओं के साथ ही सशर्त धन स्थानांतरण की प्रक्रिया से धक्का लगा है। इसका कारण यह है कि सारा धन, संचार अभियान के रूप में उपयोग किया जा रहा है, जबकि समस्या केवल और मुख्य रूप से ऐसे लोग हैं, जो लिंग निर्धारण परीक्षण में संलग्न हैं या अपनी बेटियों को पर्याप्त रूप से शिक्षित नहीं करने की गलत 'मानसिकता' से ग्रस्त हैं। लेकिन जैसा कि इस आलेख में पहले तर्क दिया गया है, लोग प्रथम दृष्टि में पारंपरिक मानसिकता से पीड़ित नहीं हैं। स्कूली बच्चों के लिए एकीकृत बाल विकास योजना (आईसीडीएस), और शिक्षा का अधिकार (आरटीई) लागू करने में रीढ़ की हड्डी रहे सर्व शिक्षा अभियान जैसे प्रमुख सरकारी योजनाओं के बजट आवंटन में पिछले दो वर्षों बड़ी कटौती की गई है, जिससे स्थिति कमजोर हुई है। ये शुरुआती योजनाएं हैं जो कि बुनियादी पोषण और बच्चों के आरंभिक समय में देखभाल सुनिश्चित करने के साथ ही सार्वभौमिक स्कूली शिक्षा, और उसके परिणामस्वरूप लड़कियों सहित सभी बच्चों के जीवन में सुधार लाने के लिए महत्वपूर्ण हैं।

यदि वे लिंग चयन के प्रसार की समस्या का हल करने में और अधिक प्रगति कर करना चाहते हैं, तो आम तौर पर, अभियान और विशेष रूप से राज्य की नीतियों को अपने कार्यों के परिणामों को पहचानना होगा। मानसिकता बदलने से परे समाज में उन परिस्थितियों को बदलना होगा, जो इस प्रकार की मानसिकता को जन्म देते हैं, और इसके लिए जागरुकता पैदा करने से शुरुआत करनी होगी। आज के युवाओं के पास यह विश्वास करने का पर्याप्त कारण होना चाहिए कि वे अपने परिवार के समर्थन के बिना भी अपने लिए एक उज्ज्वल भविष्य का निर्माण करने में सक्षम हैं। ❑

भारत में बालिका शिक्षा में प्रगति के लिए डिजिटल जेंडर एटलस

- यूनिसेफ की सहायता से तैयार
- बालिकाओं (खासकर वंचित वर्ग की) की दृष्टि से निम्न प्रदर्शन वाले भौगालिक खंडों की पहचान का माध्यम

कौशल, रोजगार व सशक्तीकरण में भारतीय महिलाओं की छलांग

- 2015-16 के दौरान मनरेगा के तहत महिलाओं की अब तक की सर्वोच्च भागीदारी (55 प्रतिशत महिलाएं)
- केन्द्रीय प्लास्टिक अभियांत्रिकी एवं प्रौद्योगिकी संस्थान ने 2015-16 के दौरान 7247 महिलाओं को प्रशिक्षण दिया।

संदर्भ

- **जॉन, मैरी ई, व अन्य:** परिवार नियोजन, लिंग नियोजन: राजस्थान, मध्य प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, पंजाब और हरियाणा के चुनींदा जिलों में प्रतिकूल बाल लिंगानुपात। (बुक्स फॉर चेंज 2008)
- **इंटरनेशनल काउंसिल फॉर रिसर्च ऑन विमेन (आईसीआरडब्ल्यू):** क्वांटिटेटिव केस स्टडी: रिसेंट ट्रेंड्स इन जेंडर, एजुकेशन एंड मैरिज ऑफ गर्ल्स इन हरियाणा, दिल्ली, 2014।
- **शेखर, टी. वी.:** लाडली एंड लक्ष्मीज इम्प्रेशंस ऑन फिनांशियल इंसेंटिव स्कीम्स फॉर द गर्ल चाइल्ड इन इंडिया इकोनॉमिक एंड पॉलिटकल विकली, 47 (34) 2012
- **यूएनवूमेन:** सेक्स रेशियोज एंड जेंडर बायस्ड सेक्स सेलेक्शन: हिस्ट्री, डिबेट्स एंड फ्यूचर डाइरेक्शंस (नई दिल्ली, यूएनवूमेन एंड यूएनएफपीए, 2015)